International Research Journal of Human Resource and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor 6.924 Volume 9, Issue 12, December 2022
Website- www.aarf.asia, Email : editoraarf@gmail.com

हिंदी भक्ति में कविताओं के विकास और महत्व का अध्ययन

SHUBHA SHUKLA
Research Scholar, The Glocal University, Saharanpur(U.P)

DR. MOHD. KAMIL
Professor, The Glocal University, Saharanpur(U.P)

सारांश

कविता का संबंध व्यक्ति के हृदय से माना गया है। कविता दिल से आनिकलती है और दिल तक पहुँचती हैं। अभी तक आपने इस पाठ्यक्रम की सभी कविताएँ तो पढ़ ही ली हैं। - रैदास, तुलसी, मीराँ आदि। आप सोच रहे होंगे कि रैदास से पहला पाठ आरंभ हो रहा है, इसलिए कविता की यात्रा भी रैदास से ही शुरू हुई होगी। एक प्रकार से आप ठीक सोच रहे हैं। कम-से-कम इस स्तर पर इस पाठ्यक्रम में कविता का प्रारंभ रैदास जी से ही हुआ है। परंतु क्या हिंदी कविता भी यहीं से शुरू हुई तो इसका उत्तर है-नहीं। तेरहवीं सदी तक धर्म के क्षेत्र में बड़ी अस्तव्यस्तता आ गई। जनता में सिद्धों और योगियों आदि द्वारा प्रचलित अंधविश्वास फैल रहे थे, शास्त्रज्ञानसंपन्न वर्ग में भी रूढ़ियों और आडंबर की प्रधानता हो चली थी। मायावाद के प्रभाव से लोकविमुखता और निष्क्रियता के भाव समाज में पनपने लगे थे। ऐसे समय में भक्तिआंदोलन के रूप में ऐसा भारतव्यापी विशाल सांस्कृतिक आंदोलन उठा जिसने समाज में उत्कर्षविधायक सामाजिक और वैयक्तिक मूल्यों की प्रतिष्ठा की। यद्यपि भक्ति का स्रोत दक्षिण से आया तथापि उत्तर भारत की नई परिस्थितियों में उसने एक नया रूप भी ग्रहण किया। मुसलमानों के इस देश में बस जाने पर एक ऐसे भक्तिमार्ग की आवश्यकता थी जो हिंदू और मुसलमान दोनों को ग्राह्य हो। इसके अतिरिक्त निम्न वर्ग के लिए भी अधिक मान्य मत वही हो सकता था जो उन्हीं के वर्ग के पुरुष द्वारा प्रवर्तित हो। महाराष्ट्र के संत नामदेव ने १४वीं शताब्दी में इसी प्रकार के भक्तिमत का सामान्य जनता में प्रचार किया जिसमें भगवान् के सगुण और निर्गुण दोनों रूप गृहीत थे। कबीर के संतमत के ये पूर्वपुरुष हैं। दूसरी ओर सूफी कवियों ने हिंदुओं की लोककथाओं का आधार लेकर ईश्वर के प्रेममय रूप का प्रचार किया।

मुख्यशब्द: हिंदी भक्ति, कविताओं के महत्व, कविता की भाषा और स्वरूप

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य में भक्ति अपना एक अहम और महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आदिकाल के बाद आये इस युग को पूर्व मध्यकाल भी कहा जाता है। जिसकी समयावधि संवत् 1375 से संवत् 1700 तक की मानी जाती है। यह हिंदी साहित्य का श्रेष्ठ युग है। जिसको जॉर्ज ग्रियर्सन ने स्वर्णकाल, श्यामसुन्दर दास ने स्वर्णयुग, आचार्य राम चंद्र शुक्ल ने भक्ति काल एवं हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोक जागरण कहा। सम्पूर्ण साहित्य के श्रेष्ठ कवि और उत्तम रचनाएं इसी युग में प्राप्त होती हैं।

भक्ति

भक्ति का शाब्दिक अर्थ है "लगाव, भागीदारी, प्रेम, विश्वास, प्रेम, भक्ति, पूजा, पवित्रता।" [१] हिंदू धर्म में, यह एक भक्त द्वारा एक व्यक्तिगत भगवान या एक प्रतिनिधित्वकर्ता भगवान के लिए भक्ति, और प्यार करने के लिए संदर्भित करता है।

श्वेताश्वतर उपनिषद जैसे प्राचीन ग्रंथों में, शब्द का सीधा मतलब है किसी भी प्रयास के लिए भागीदारी, भक्ति और प्रेम, जबकि भगवद्गीता में, यह आध्यात्मिकता के संभावित मार्गों में से एक को और भक्ति मार्ग में, भक्ति मार्ग के रूप में दर्शाता है। भारतीय धर्मों में भक्ति "भावनात्मक भक्तिवाद" है, विशेष रूप से एक व्यक्तिगत भगवान या आध्यात्मिक विचारों के लिए। यह शब्द एक आंदोलन को भी संदर्भित करता है, जो अल्वार और नयनारों द्वारा अग्रसर होता है, जो देव विष्णु (वैष्णववाद), ब्रह्मा (ब्राह्मणवाद), शिवा (शैववाद) और देवी (शक्तिवाद) के आसपास विकसित होता है, पहली सहस्राब्दी ई.पू. के दूसरे भाग में। यह विभिन्न हिंदू परंपराओं में 12 वीं शताब्दी के बाद भारत में तेजी से विकसित हुआ, संभवतः भारत में इस्लाम के आगमन की प्रतिक्रिया में।

भक्ति विचारों ने भारत में कई लोकप्रिय ग्रंथों और संत-कवियों को प्रेरित किया है। उदाहरण के लिए, भागवत पुराण, कृष्ण-संबंधित पाठ है जो हिंदू धर्म में भक्ति आंदोलन से जुड़ा है। भक्ति भारत में प्रचलित अन्य धर्मों में भी पाई जाती है, और इसने आधुनिक युग में ईसाई धर्म और हिंदू धर्म के बीच संबंधों को प्रभावित किया है। निर्गुणी भक्ति (बिना गुणों के परमात्मा की भक्ति) सिख धर्म में पाई जाती है, साथ ही हिंदू धर्म भी। भारत के बाहर, कुछ दक्षिण पूर्व एशियाई और पूर्वी एशियाई बौद्ध परंपराओं में भावनात्मक भक्ति पाई जाती है, और इसे कभी-कभी भट्टी के रूप में भी जाना जाता है।

भक्ति शब्द का अर्थ साम्य से अलग लेकिन काम से अलग है। काम्या भावनात्मक संबंध, कभी-कभी कामुक भक्ति और कामुक प्रेम के साथ संबंध बनाती है। भक्ति, इसके विपरीत, आध्यात्मिक, धार्मिक अवधारणाओं या सिद्धांतों के लिए एक प्रेम और भक्ति है, जो भावना और बुद्धि दोनों को संलग्न करती है। करेन पेचलिस का कहना है कि भक्ति शब्द को असंयमित भावना के रूप में नहीं समझा जाना चाहिए, लेकिन प्रतिबद्ध सगाई के रूप में। वह कहती है कि, हिंदू धर्म में भक्ति की अवधारणा में, सगाई में भावना और बुद्धि के बीच एक साथ तनाव शामिल होता है, "सामाजिक संदर्भ और लौकिक स्वतंत्रता की पुन:

भावना, विचार को एक विचारशील, सचेत दृष्टिकोण में अनुभव करने के लिए बुद्धि"। भक्ति का अभ्यास करने वाले को भक्त कहा जाता है।

वैदिक संस्कृत साहित्य में, भक्ति शब्द का सामान्य अर्थ है "आपसी लगाव, भक्ति, प्रेम के लिए भक्ति," जैसे कि मानवीय रिश्तों में, सबसे अधिक प्रिय-प्रेमी, मित्र-मित्र, राजा-विषय, माता-पिता के बीच ।यह आध्यात्मिक गुरु (गुरु) के प्रति समर्पण को गुरु-भक्ति, या एक व्यक्तिगत देवता के रूप में संदर्भित कर सकता है, या आध्यात्मिकता के लिए बिना रूप (निर्गुण) के।

श्रीलंकाई बौद्ध विद्वान सनथ नानायकारा के अनुसार, अंग्रेजी में एक भी शब्द ऐसा नहीं है जो भारतीय धर्मों में भक्ति की अवधारणा का पर्याप्त रूप से अनुवाद या प्रतिनिधित्व करता हो। "भक्ति, विश्वास, भक्ति विश्वास" जैसे शब्द भक्ति के कुछ पहलुओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, लेकिन इसका अर्थ बहुत अधिक है। अवधारणा में गहरा लगाव, लगाव की भावना शामिल है, लेकिन इच्छा नहीं है क्योंकि "इच्छा स्वार्थी है, स्नेह निःस्वार्थ है"। कुछ विद्वान, नानायक्कारा कहते हैं, इसे साधना (संस्कृत: श्राद्ध) से जोड़ा जाता है जिसका अर्थ है "विश्वास, विश्वास या विश्वास"। हालाँकि, भक्ति अपने आप में एक अंत, या आध्यात्मिक ज्ञान के लिए एक मार्ग है। भक्ति शब्द का अर्थ हिंदू धर्म में मोक्ष (आध्यात्मिक स्वतंत्रता, मुक्ति, मोक्ष) के लिए कई वैकल्पिक आध्यात्मिक मार्गों में से एक है, और इसे भक्ति मार्ग या भक्ति योग के रूप में जाना जाता है। अन्य मार्ग हैं ज्ञान मार्ग (ज्ञान का मार्ग), कर्म मार्ग (काम का मार्ग), राजा मार्ग (चिंतन और मनन का मार्ग)।

भक्ति शब्द का आमतौर पर ओरिएंटलिस्ट साहित्य में "भक्ति" के रूप में अनुवाद किया गया है। औपनिवेशिक युग के लेखकों ने विभिन्न रूप से भक्ति को रहस्यवाद या एकेश्वरवादी समानता के साथ लोगों को बिछाने की "आदिम" धार्मिक भक्ति के रूप में वर्णित किया। हालांकि, आधुनिक विद्वानों ने कहा कि "भक्ति" भक्ति का एक भ्रामक और अधूरा अनुवाद है। कई समकालीन विद्वानों ने इस शब्दावली पर सवाल उठाए हैं, और अब भक्ति शब्द को कई आध्यात्मिक दृष्टिकोणों में से एक के रूप में पहचानते हैं जो वैदिक संदर्भ और जीवन के हिंदू तरीके पर प्रतिबिंब से उभरे हैं। भारतीय धर्मों में भक्ति एक ईश्वर या धर्म के प्रति अनुष्ठान नहीं है, बल्कि एक ऐसे मार्ग में भागीदारी है जिसमें व्यवहार, नैतिकता, प्रेम और आध्यात्मिकता शामिल है। इसमें अन्य बातों के अलावा, मन की स्थिति को परिष्कृत करना, ईश्वर को जानना, ईश्वर में भाग लेना, और ईश्वर को आंतरिक बनाना शामिल है। "भक्ति" के बजाय, "भक्ति" शब्द की जगह विद्वता साहित्य में भक्ति शब्द के लिए एक शब्द के रूप में दिखाई दे रहा है। डेविड लोरेंजेन कहते हैं कि सिख और हिंदू धर्म में भक्ति एक महत्वपूर्ण शब्द है। वे दोनों कई अवधारणाओं और मूल आध्यात्मिक विचारों को साझा करते हैं, लेकिन निर्गुणी की भक्ति (गुणों के बिना परमात्मा की भक्ति) विशेष रूप से सिख धर्म में महत्वपूर्ण है। हिंदू धर्म में, विविध विचार जारी हैं, जहां सगुनी और निर्गुणी भक्ति (गुणों के साथ या बिना परमात्मा की भक्ति) या आध्यात्मिकता के वैकल्पिक मार्ग हिंदू की पसंद के लिए छोड़ दिए गए विकल्पों में से हैं।

भक्तिकाल के कवि

भक्तिकाल में कृष्णभक्ति शाखा के अंतर्गत आने वाले प्रमुख कवि हैं - कबीरदास, संत शिरोमणि रविदास,तुलसीदास, सूरदास, नंददास, कृष्णदास, परमानंददास, कुंभनदास, चतुर्भुजदास, छीतस्वामी, गोविन्दस्वामी, हितहरिवंश, गदाधरभट्ट, मीराबाई, स्वामीहरिदास, सूरदासमदनमोहन, श्रीभट्ट, व्यास जी, रसखान, ध्रुवदास तथा चैतन्य महाप्रभु।

सूरदास

हिन्दी साहित्य के श्रेष्ठ कृष्णभक्त कवि सूरदास का जन्म **1483** ई. के आस-पास हुआ था। इनकी मृत्यु अनुमानत: **1563** ई. के आस-पास हुई। इनके बारे में 'भक्तमाल' और 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' में थोड़ी-बहुत जानकारी मिल जाती है। 'आईने अकबरी' और 'मुंशियात अब्बुलफजल' में भी किसी संत सूरदास का उल्लेख है, किन्तु वे बनारक के कोई और सूरदास प्रतीत होते हैं। अनुश्रुति यह अवश्य है कि अकबर बादशाह सूरदास का यश सुनकर उनसे मिलने आए थे। 'भक्तमाल' में इनकी भक्ति, कविता एवं गुणों की प्रशंसा है तथा इनकी अंधता का उल्लेख है। 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' के अनुसार वे आगरा और मथुरा के बीच साधु या स्वामी के रूप में रहते थे। वे वल्लभाचार्य के दर्शन को गए और उनसे लीलागान का उपदेश पाकर कृष्ण-चरित विषयक पदों की रचना करने लगे। कालांतर में श्रीनाथ जी के मंदिर का निर्माण होने पर महाप्रभु वल्लभाचार्य ने इन्हें यहाँ कीर्तन का कार्य सौंपा. सूरदास के विषय में कहा जाता है कि वे जन्मांध थे। उन्होंने अपने को 'जन्म को आँधर' कहा भी है। किन्तु इसके शब्दार्थ पर अधिक नहीं जाना चाहिए। सूर के काव्य में प्रकृतियाँ और जीवन का जो सूक्ष्म सौन्दर्य चित्रित है उससे यह नहीं लगता कि वे जन्मांध थे। उनके विषय में ऐसी कहानी भी मिलती है कि तीव्र अंतर्द्वन्द्व के किसी क्षण में उन्होंने अपनी आँखें फोड़ ली थीं। उचित यही मालूम पड़ता है कि वे जन्मांध नहीं थे। कालांतर में अपनी आँखों की ज्योति खो बैठे थे। सूरदास अब अंधों को कहते हैं। यह परम्परा सूर के अंधे होने से चली है। सूर का आशय 'शूर' से है। शूर और सती मध्यकालीन भक्त साधकों के आदर्श थे।

कृतियाँ

1. सूरसागर

2. सूरसारावली

3. साहित्य लहरी

संत शिरोमणि रविदास

रैदास नाम से विख्यात संत रविदास का जन्म सन् **1388** (इनका जन्म कुछ विद्वान **1398** में हुआ भी बताते हैं) को बनारस में हुआ था। रैदास कबीर के समकालीन हैं। रैदास की ख्याति से प्रभावित होकर सिकंदर लोदी ने इन्हें दिल्ली आने का निमंत्रण भेजा था।

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)

मध्ययुगीन साधकों में रैदास का विशिष्ट स्थान है। कबीर की तरह रैदास भी संत कोटि के प्रमुख कवियों में विशिष्ट स्थान रखते हैं। कबीर ने 'संतन में रविदास' कहकर इन्हें मान्यता दी है।

मूर्तिपूजा, तीर्थयात्रा जैसे दिखावों में रैदास का बिल्कुल भी विश्वास न था। वह व्यक्ति की आंतरिक भावनाओं और आपसी भाईचारे को ही सच्चा धर्म मानते थे। रैदास ने अपनी काव्य-रचनाओं में सरल, व्यावहारिक ब्रजभाषा का प्रयोग किया है, जिसमें अवधी, राजस्थानी, खड़ी बोली और उर्दू-फ़ारसी के शब्दों का भी मिश्रण है। रैदास को उपमा और रूपक अलंकार विशेष प्रिय रहे हैं। सीधे-सादे पदों में संत कवि ने हृदय के भाव बड़ी स़फाई से प्रकट किए हैं। इनका आत्मनिवेदन, दैन्य भाव और सहज भक्ति पाठक के हृदय को उद्वेलित करते हैं। रैदास के चालीस पद सिखों के पवित्र धर्मग्रंथ 'गुरुग्रंथ साहब' में भी सम्मिलित हैं। कहते हैं मीरा के गुरु रैदास ही थे।

रविदास जी के पद

अब कैसे छूटे राम रट लागी। प्रभु जी, तुम चंदन हम पानी, जाकी अँग-अँग बास समानी॥ प्रभु जी, तुम घन बन हम मोरा, जैसे चितवत चंद चकोरा॥ प्रभु जी, तुम दीपक हम बाती, जाकी जोति बरै दिन राती॥ प्रभु जी, तुम मोती, हम धागा जैसे सोनहिं मिलत सोहागा॥ प्रभु जी, तुम स्वामी हम दासा, ऐसी भक्ति करै 'रैदासा'॥

रैदास के दोहे **(काव्य)**

जाति-जाति में जाति हैं, जो केतन के पात। रैदास मनुष ना जुड़ सके जब तक जाति न जात।।

रैदास कनक और कंगन माहि जिमि अंतर कछु नाहिं। तैसे ही अंतर नहीं हिन्दुअन तुरकन माहि।।

हिंदू तुरक नहीं कछु भेदा सभी मह एक रक्त और मासा। दोऊ एकऊ दूजा नाहीं, पेख्यो सोइ रैदासा।।

कह रैदास तेरी भगति दूरि है, भाग बड़े सो पावै। तजि अभिमान मेटि आपा पर, पिपिलक हवै चुनि खावै।।

कृस्न, करीम, राम, हरि, राघव, जब लग एक न पेखा। वेद कतेब कुरान, पुरानन, सहज एक नहिं देखा।।

ध्रुवदास

ये श्री हितहरिवंश के शिष्य स्वप्न में हुए थे। इसके अतिरिक्त उनका कुछ जीवनवृत्त प्राप्त नहीं हुआ। वे अधिकतर वृंदावन में ही रहा करते थे। उनकी रचना बहुत ही विस्तृत है और इन्होंने पदों के अतिरिक्त दोह, चौपाई, कवित्त, सवैये आदि अनेक छंदों में भक्ति और प्रेमतत्वों का वर्णन किया है।

कृतियाँ-

1.वृंदावनसत

2.सिंगारसत

3.रसरत्नावली

4.नेहमंजरी

5.रहस्यमंजरी

रसखान

ये दिल्ली के एक पठान सरदार थे। ये लौकिक प्रेम से कृष्ण प्रेम की ओर उन्मुख हुए. ये गोस्वामी विट्ठलनाथ के बड़े कृपापात्र शिष्य थे। रसखान ने कृष्ण का लीलागान गेयपदों में नहीं, सवैयों में किया है। रसखान को सवैया छंद सिद्ध था। जितने सहज, सरस, प्रवाहमय सवैये रसखान के हैं, उतने शायद ही किसी अन्य कवि के हों. रसखान का कोई ऐसा सवैया नहीं मिलता जो उच्च स्तर का न हो। उनके सवैये की मार्मिकता का बहुत बड़ा आधार दृश्यों और बाह्यांतर स्थितियों की योजना में है। वही योजना रसखान के सवैयों के ध्वनि-प्रवाह में है। ब्रजभाषा का ऐसा सहज प्रवाह अन्यत्र बहुत कम मिलता है। रसखान सूफ़ियों का हृदय लेकर कृष्ण की लीला पर काव्य रचते हैं। उनमें उल्लास, मादकता और उत्कटता तीनों का संयोग है। ब्रज भूमि के प्रति जो मोह रसखान की कविताओं में दिखाई पड़ता है, वह उनकी विशेषता है।

कृतियाँ

1. प्रेमवाटिका

2. सुजान रसखान

व्यास जी

इनका पूरा नाम हरीराम व्यास था और वे ओरछा के रहनेवाले थे। ओरछानरेश मधुकर शाह के ये राजगुरू थे। पहले ये गौड़ सम्प्रदाय के वैष्णव थे पीछे हितहरिवंशजी के शिष्य होकर राधाबल्लभी हो गए। इनका समय सन् **1563** ई. के आसपास है। इनकी रचना परिमाण में भी बहुत विस्तृत है और विषय भेद के विचार से भी अधिकांश कृष्णभक्तों की अपेक्षा व्यापक है। ये श्रीकृष्ण की बाललीला और श्रृंगारलीला में लीन रहने पर भी बीच में संसार पर दृष्टि डाला करते थे। इन्होंने तुलसीदास के समान खलों, पाखंडियों आदि का भी स्मरण किया और रसखान के अतिरिक्त तत्वनिरूपण में भी ये प्रवृत्त हुए हैं।

कृतियाँ

1. रासपंचाध्यायी

स्वामी हरिदास

ये महात्मा वृंदावन में निंबार्क मतांतर्गत टट्टी संप्रदाय, जिसे सखी संप्रदाय भी कहते है, के संस्थापक थे और अकबर के समय में एक सिद्ध भक्त और संगीत-कला-कोविद माने जाते थे। कविताकाल सन् **1543** से **1560** ई. ठहरता है। प्रसिद्ध गायनाचार्य तानसेन इनका गुरूवत् सम्मान करते थे। यह प्रसिद्ध है कि अकबर बादशाह साधु के वेश में तानसेन के साथ इनका गाना सुनने के लिए गया था। कहते हैं कि तानसेन इनके सामने गाने लगे और उन्होंने जानबूझकर गाने में कुछ भूल कर दी। इसपर स्वामी हरिदास ने उसी गाना को शुद्ध करके गाया. इस युक्ति से अकबर को इनका गाना सुनने का सौभाग्य प्राप्त हो गया। पीछे अकबर ने बहुत कुछ पूजा चढ़ानी चाही पर इन्होंने स्वीकृन न की। इनका जन्म समय कुछ ज्ञात नहीं है।

कृतियाँ

1. स्वामी हरिदास जी के पद

2. हरिदास जी की बानी

मीराबाई

ये मेड़तिया के राठौड़ रत्नसिंह की पुत्री, राव दूदाजी की पौत्री और जोधपुर के बसानेवाले प्रसिद्ध राव जोधा की प्रपौत्री थीं। इनका जन्म सन् **1516** ई. में चोकड़ी नाम के एक गाँव में हुआ था और विवाह उदयपुर के महाराणा कुमार भोजराज के साथ हुआ था। ये आरंभ से ही कृष्ण भक्ति में लीन रहा करती थी। विवाह के उपरांत थोड़े दिनों में इनके पति का परलोकवास हो गया। ये प्राय: मंदिर में जाकर उपस्थित भक्तों और संतों के बीच श्रीकृष्ण भगवान की मूर्ती के सामने आनंदमग्न होकर नाचती और गाती थी। कहते हैं कि इनके इस राजकुलविरूद्ध आचरण से इनके स्वजन लोकनिंदा के भय से रूष्ट रहा करते थे। यहाँ तक कहा जाता है कि इन्हें कई बार विष देने का प्रयत्न किया गया, पर विष का कोई प्रभाव इन पर न हुआ। घरवालों के व्यवहार से खिन्न होकर ये द्वारका और वृंदावन के मंदिरों में घूम-घूमकर भजन सुनाया करती थीं। ऐसा प्रसिद्ध है कि घरवालों से तंग आकर इन्होंने गोस्वामी तुलसीदास को यह पद लिखकर भेजा था: स्वस्ति श्री तुलसी कुल भूषन दूषन हरन गोसाईं। बारहिं बार प्रनाम करहुँ, अब हरहु सोक समुदाई ॥ घर के स्वजन हमारे जेते सबन्ह उपाधि बढ़ाई ॥ साधु संग अरू भजन करत मोहिं देत कलेस महाई ॥ मेरे मात पिता के सम हौ, हरिभक्तन्ह सुखदाई ॥ हमको कहा उचित करिबो है, सो लिखिए समझाई ॥ इस पर गोस्वामी जी ने ‘विनयपत्रिका’ का यह पद लिखकर भेजा था : जाके प्रिय न राम बैदेही। सो नर तजिय कोटि बैरी सम जद्यपि परम सनेही ॥ नाते सबै राम के मनियत सुहृद सुसेव्य जहाँ लौं। अंजन कहा आँखि जौ फूटै, बहुतक कहौं कहाँ लौं ॥ मीराबाई की मृत्यु द्वारका में सन् **1546** ई. में हो चुकी थी। अत: यह

जनश्रुति किसी की कल्पना के आधार पर ही चल पड़ी. मीराबाई का नाम प्रधान भक्तों में है और इनका गुणगान नाभाजी, ध्रुवदास, व्यास जी, मलूकदास आदि सब भक्तों ने किया है।

कृतियाँ

1. नरसी जी का मायरा

2. गीतगोविंद टीका

3. राग गोविंद

4. राग सोरठ के पद

गदाधर भट्ट

ये दक्षिणी ब्राह्मण थे। इनके जन्म का समय ठीक से पता नहीं, पर यह बात प्रसिद्ध है कि ये श्री चैतन्य महाप्रभु को भागवत सुनाया करते थे। इनका समर्थन भक्तमाल की इन पंक्तियों से भी होता है: भागवत सुधा बरखै बदन, काहू को नाहिंन दुखद I गुणनिकर गदाधर भट्ट अति सबहिन को लागै सुखद II संस्कृत के चूडांत पंडित होने के कारण शब्दों पर इनका बहुत विस्तृत अधिकार था। इनका पदविन्यास बहुत ही सुंदर है।

हितहरिवंश

राधावल्लभी सम्प्रदाय के प्रवर्तक गोसाईं हितहरिवंश का जन्म सन् **1502** ई. में मथुरा से **4** मील दक्षिण बादगाँव में हुआ था। राधावल्लभी सम्प्रदाय के पंडित गोपालप्रसाद शर्मा ने इनका जन्म सन् **1473** ई. माना है। इनके पिता को नाम केशवदास मिश्र और माता का नाम तारावती था। कहते हैं कि हितहरिवंश पहले माध्वानुयायी गोपाल भट्ट के शिष्य थे। पीछे इन्हें स्वप्न में राधिकाजी ने मंत्र दिया और इन्होंने अपना एक अलग संप्रदाय चलाया। अत: हित सम्प्रदाय को माध्व संप्रदाय के अंतर्गत मान सकते हैं। हितहरिवंश के चार पुत्र और एक कन्या हुई। गोसाईं जी ने सन् **1525** ई. में श्री राधावल्लभ जी की मूर्ती वृंदावन में स्थापित की और वहीं विरक्त भाव से रहने लगे। ये संस्कृत के अच्छे विद्वान और भाषा काव्य के अच्छे मर्मज्ञ थे। ब्रजभाषा की रचना इनकी यद्यपि बहुत विस्तृत नहीं है तथापि बड़ी सरस और हृदयग्राहिणी है।

कृतियाँ–

1. राधासुधानिधि

2. हित चौरासी

© **Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)**

भक्ति काल

हिंदी साहित्य का भक्ति काल **1375** वि**0** से **1700** वि**0** तक माना जाता है। यह युग भक्तिकाल के नाम से प्रख्यात है। यह हिंदी साहित्य का श्रेष्ठ युग है। समस्त हिंदी साहित्य के श्रेष्ठ कवि और उत्तम रचनाएं इस युग में प्राप्त होती हैं।

दक्षिण में आलवार बंधु नाम से प्रख्यात भक्त हो गए। इनमें से कई तथाकथित नीची जातियों से आए थे। वे बहुत पढे-लिखे नहीं थे परंतु अनुभवी थे। आलवारों के पश्चात दक्षिण में आचार्यों की एक परंपरा चली जिसमें रामानुजाचार्य प्रमुख थे।

रामानुजाचार्य की परंपरा में रामानंद हुए। आपका व्यक्तित्व असाधारण था। वे उस समय के सबसे बड़े आचार्य थे। उन्होंने भक्ति के क्षेत्र में ऊंच-नीच का भेद तोड़ दिया। सभी जातियों के अधिकारी व्यक्तियों को आपने शिष्य बनाया। उस समय का सूत्र हो गयाः

जाति-पांति पूछे नहिं कोई।

हरि को भजै सो हरि का होई।।

रामानंद ने विष्णु के अवतार राम की उपासना पर बल दिया। रामानंद ने और उनकी शिष्य-मंडली ने दक्षिण की भक्तिगंगा का उत्तर में प्रवाह किया। समस्त उत्तर-भारत इस पुण्य-प्रवाह में बहने लगा। भारत भर में उस समय पहुंचे हुए संत और महात्मा भक्तों का आविर्भाव हुआ।

महाप्रभु वल्लभाचार्य ने पुष्टि-मार्ग की स्थापना की और विष्णु के कृष्णावतार की उपासना करने का प्रचार किया। आपके द्वारा जिस लीला-गान का उपदेश हुआ उसने देशभर को प्रभावित किया। अष्टछाप के सुप्रसिध्द कवियों ने आपके उपदेशों को मधुर कविता में प्रतिबिंबित किया।

इसके उपरांत माध्व तथा निंबार्क संप्रदायों का भी जन-समाज पर प्रभाव पड़ा है। साधना-क्षेत्र में दो अन्य संप्रदाय भी उस समय विद्यमान थे। नाथों के योग-मार्ग से प्रभावित संत संप्रदाय चला जिसमें प्रमुख व्यक्तित्व संत कबीरदास का है। मुसलमान कवियों का सूफीवाद हिंदुओं के विशिष्टाद्वैतवाद से बहुत भिन्न नहीं है। कुछ भावुक मुसलमान कवियों द्वारा सूफीवाद से रंगी हुई उत्तम रचनाएं लिखी गईं। संक्षेप में भक्ति-युग की चार प्रमुख काव्य-धाराएं मिलती हैं : ज्ञानाश्रयी शाखा, प्रेमाश्रयी शाखा, कृष्णाश्रयी शाखा और रामाश्रयी शाखा, प्रथम दोनों धाराएं निर्गुण मत के अंतर्गत आती हैं, शेष दोनों सगुण मत के।

- ज्ञानाश्रयी शाखा
- प्रेमाश्रयी शाखा
- कृष्णाश्रयी शाखा
- रामाश्रयी शाखा

भक्ति आंदोलन

भक्ति आंदोलन आस्तिक भक्ति प्रवृत्ति को दर्शाता है जो मध्यकालीन हिंदू धर्म में उभरा और बाद में सिख धर्म में क्रांति हुई। यह आठवीं शताब्दी के दक्षिण भारत (अब तमिलनाडु और केरल) में उत्पन्न हुआ, और उत्तर की ओर फैल गया। यह १५ वीं शताब्दी से पूर्व और उत्तर भारत में बह गया, १५ वीं और १7 वीं शताब्दी के बीच अपने चरम पर पहुंच गया। भक्ति आंदोलन विभिन्न देवी-देवताओं के आसपास क्षेत्रीय रूप से विकसित हुआ, और कुछ उप-संप्रदाय वैष्णववाद (विष्णु), शैववाद (शिव), शक्तिवाद (शक्ति देवी), और स्मार्टवाद थे। भक्ति आंदोलन ने स्थानीय भाषाओं का उपयोग करते हुए प्रचार किया ताकि यह संदेश जन-जन तक पहुंचे। यह आंदोलन कई कवि-संतों से प्रेरित था, जिन्होंने अद्वैत वेदांत के पूर्ण अद्वैतवाद के लिए द्वैत के आस्तिक द्वैतवाद से लेकर दार्शनिक पदों की एक विस्तृत श्रृंखला का निर्माण किया।

इस आंदोलन को पारंपरिक रूप से हिंदू धर्म में एक प्रभावशाली सामाजिक सुधार के रूप में माना जाता है, और किसी के जन्म या लिंग की परवाह किए बिना आध्यात्मिकता के लिए एक व्यक्ति-केंद्रित वैकल्पिक मार्ग प्रदान किया जाता है। उत्तर-आधुनिक विद्वान इस पारंपरिक दृष्टिकोण पर सवाल उठाते हैं और क्या कभी भक्ति आंदोलन किसी तरह का सुधार या विद्रोह था। वे सुझाव देते हैं कि भक्ति आंदोलन प्राचीन वैदिक परंपराओं का पुनरुद्धार, पुनर्मूल्यांकन और पुनर्संगठन था।

सामाजिक प्रभाव

भक्ति आंदोलन मध्ययुगीन हिंदू समाज का एक भक्तिपूर्ण रूपांतरण था, जिसमें वैदिक अनुष्ठानों या मोक्ष के लिए वैकल्पिक रूप से तपस्वी भिक्षु जैसी जीवन शैली ने व्यक्तिगत रूप से परिभाषित देवता के साथ व्यक्तिवादी प्रेम संबंध का मार्ग प्रशस्त किया। मोक्ष जो पहले केवल ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जाति के पुरुषों द्वारा प्राप्य माना जाता था, सभी के लिए उपलब्ध हो गया। अधिकांश विद्वानों ने कहा कि भक्ति आंदोलन ने शूद्र और अछूत समुदायों की महिलाओं और सदस्यों को आध्यात्मिक उद्धार के लिए एक समावेशी मार्ग प्रदान किया। कुछ विद्वान इस बात से असहमत हैं कि भक्ति आंदोलन का आधार ऐसी सामाजिक असमानताएँ थीं।

कवि-संतों की लोकप्रियता में वृद्धि हुई और क्षेत्रीय भाषाओं में भक्ति गीतों पर साहित्य विपुल हो गया। इन कवि-संतों ने अद्वैत वेदांत के पूर्ण अद्वैतवाद के लिए द्वैत के द्वैतवाद से लेकर उनके समाज के भीतर कई प्रकार के दार्शनिक पदों का उल्लेख किया। **[ts]** कबीर, उदाहरण के लिए कवि-संत, उपनिषदिक शैली में, सत्य जानने की स्थिति:

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

वहाँ कोई रचना या रचनाकार नहीं है,

कोई सकल या ठीक नहीं, कोई हवा या आग नहीं,

सूर्य, चंद्रमा, पृथ्वी या पानी,

कोई उज्ज्वल रूप नहीं, कोई समय नहीं,

कोई शब्द नहीं, कोई मांस नहीं, कोई विश्वास नहीं,

कोई कारण और प्रभाव नहीं, और न ही वेद का कोई विचार,

कोई हरि या ब्रह्मा, कोई शिव या शक्ति,

कोई तीर्थ और कोई अनुष्ठान नहीं,

वहां कोई मां, पिता या गुरु नहीं ...

- कबीर, शबदा द्वारा अनुवादित

15 वीं शताब्दी की प्रारंभिक भक्ति कवि-संत पीपा ने कहा,

देह के भीतर देवता है, देह के भीतर मंदिर है,

शरीर के भीतर सभी जंगम

शरीर के भीतर धूप, दीप और अन्न-प्रसाद,

शरीर के भीतर पूजा के पत्ते।

इतनी ज़मीन खोजने के बाद,

मैंने अपने शरीर के भीतर नौ खजाने पाए,

अब आगे और आने वाला नहीं होगा,

मैं राम की कसम खाता हूं।

- पीपा, गु धनसारी, वूडविले द्वारा अनुवादित

भारत में भक्ति आंदोलन का प्रभाव यूरोप में ईसाई धर्म के प्रोटेस्टेंट सुधार के समान था। इसने साझा धार्मिकता, प्रत्यक्ष भावनात्मक और परमात्मा की बुद्धि, और संस्थागत अधिरचना के उपरि के बिना आध्यात्मिक विचारों की खोज को विकसित किया। मध्ययुगीन हिंदुओं के बीच आध्यात्मिक नेतृत्व और

सामाजिक सामंजस्य के नए रूप सामने आए, जैसे कि सामुदायिक गायन, देवता के नामों का एक साथ जप, त्योहार, तीर्थयात्रा, अनुष्ठान से संबंधित साविज़्म, वैष्णववाद और शक्तिवाद। इन क्षेत्रीय प्रथाओं में से कई आधुनिक युग में बच गए हैं।

निष्कर्ष

मध्ययुग में भक्ति का व्यापक प्रचार हुआ और वल्लभाचार्य के पुष्टिमार्ग के अतिरिक्त अन्य भी कई संप्रदाय स्थापित हुए, जिन्होंने कृष्णकाव्य को प्रभावित किया। हितहरिवंश (राधावल्लभी संप्र.), हरिदास (टट्टी संप्र.), गदाधर भट्ट और सूरदास मदनमोहन (गौड़ीय संप्र.) आदि अनेक कवियों ने विभिन्न मतों के अनुसार कृष्णप्रेम की मार्मिक कल्पनाएँ कीं। मीरा की भक्ति दांपत्यभाव की थी जो अपने स्वत:स्फूर्त कोमल और करुण प्रेमसंगीत से आंदोतिल करती हैं। नरोत्तमदास, रसखान, सेनापति आदि इस धारा के अन्य अनेक प्रतिभाशाली कवि हुए जिन्होंने हिंदी काव्य को समृद्ध किया। यह सारा कृष्णकाव्य मुक्तक या कथाश्रित मुक्तक है। संगीतात्मकता इसका एक विशिष्ट गुण है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- ए बी सी भक्ति, एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (2009)
- करेन पेकेलिस (2011), "भक्ति ट्रेडिशन", द कॉन्टिनम कंपेनियन टू हिंदू स्टडीज (संपादकों: जेसिका फ्रेजियर, गेविन फ्लड), ब्लूम्सबरी, आईएसबीएन 978-0826499660, पृष्ठ 107-121 में
- जॉन लोक्तेफ़ेल्ड (2014), द इलस्ट्रेटेड एनसाइक्लोपीडिया ऑफ़ हिंदूइज़, रोसेन पब्लिशिंग (न्यूयॉर्क), आईएसबीएन 978-0823922871, पृष्ठ 98-100। भक्तिमृगा और ज्ञानमृगा पर लेख भी देखें।
- हंस जी। किप्पेनबर्ग; याम बी। कुइपर; एंडी एफ सैंडर्स (1990)। धर्म और विचार में व्यक्ति की अवधारणा। वाल्टर डे ग्रुइटर। पी। 295. आईएसबीएन 978-3-11-087437-2।, उद्धरण: "भावनात्मक भक्तिवाद (भक्ति) की नींव दक्षिण भारत में हमारे युग की पहली सहस्राब्दी की दूसरी छमाही (...) में रखी गई थी।"
- इंदिरा विश्वनाथन पीटरसन (2014)। कविताओं को शिव: तमिल संतों के भजन। प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस। पीपी। 4, फुटनोट 4. आईएसबीएन 978-1-4008-6006-7।
- राइनहार्ट, रॉबिन (2004)। समकालीन हिंदू धर्म: अनुष्ठान, संस्कृति और अभ्यास। **ABC-CLIO**। पी। 45. आईएसबीएन 978-1-57607-905-8।
- जंप अप टू ए: ए फ्लड, गेविन (1996)। हिंदू धर्म का एक परिचय। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस। पी। 131. आईएसबीएन 978-0-521-43878-0।

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)

- ऊपर कूदो: ए बी सी डी ई एम्ब्री, एंसली थॉमस; स्टीफन एन। हे; विलियम थियोडोर डी बैरी (1988)। भारतीय परंपरा के स्रोत। कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस। पी। 342. आईएसबीएन 978-0-231-06651-8।
- जेरी बेंटले, ओल्ड वर्ल्ड एनकाउंटर्स: क्रॉस कल्चरल कॉन्टेक्ट्स एंड एक्सचेंजेज इन प्री-मॉडर्न टाइम्स (न्यूयॉर्क: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1993), पी। 120।
- जम्प टू अप: ए बी सी डी ई कटलर, नॉर्मन (1987)। अनुभव के गीत। इंडियाना यूनिवर्सिटी प्रेस। पी। 1. आईएसबीएन 978-0-253-35334-4।
- बाढ़, गैविन डी (2003)। द ब्लैकवेल कम्पेनियन टू हिंदूइज़्म। विले-ब्लैकवेल। पी। 185. आईएसबीएन 978-0-631-21535-6।
- कूदो अप: ए बी नील, स्टीफन (2002)। भारत में ईसाई धर्म का इतिहास, 1707-1858। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस। पी। 412. आईएसबीएन 978-0-521-89332-9।1।